समीक्षा

मालवा के माच सहित विविध लोक आयामों को समेटता एक महत्वपूर्ण ग्रंथ

❑ गफ़ूर स्नेही

अंकुर मंच उज्जैन द्वारा प्रकाशित एवं रंग समीक्षक डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा द्वारा संपादित मुख्य रूप से माच पर आधारित पुस्तक 'मालवा का लोक-नाट्य और अन्य विधाएँ' हाल के वर्षों के प्रकाशनों के बीच महत्वपूर्ण उपलब्धि है। प्रकाशकीय में हफीज खान ने इस परम्परा के समक्ष मौजूद चुनौतियों के प्रति चिंता प्रकट करते हुए निरंतरता एवं समर्पण की आवश्यकता बताई। संपादक एवं प्रकाशक का परिश्रम किताब में सर्वत्र परिलक्षित होता है। संपादकीय में माच को एक संपूर्ण नाट्य और मालवा अंचल का मूर्त स्वरूप माना गया है। पुस्तक में सम्मिलित लेखों ने मालवा के लगभग संपूर्ण आयामों को समेट दिया है। जिज्ञासु एवं ज्ञान पिपासुओं के लिए पुस्तक सप्त सिंधुओं का जल उपलब्ध कराती है।

भारतीय लोक-नाट्य और माच में देवीलाल सामर ने भरत मुनि के लिखित भाषाई स्वरूप को जटिल नियमबद्ध कहा तो लोक बोली को सरल-सहज लोक-नाट्य में समाहित बताया है। उन्होंने नाटक, रूपक और नाट्य की व्याख्या के साथ लोक नाटकों की उत्पत्ति और इतिहास पर भी प्रकाश डाला है। इनके स्रोत रामायण, महाभारत प्रमुख हैं। इनमें आंचलिक प्रेम कथाओं के साथ मुस्लिम आक्रमणों के समय उर्दू-फारसी का सीधा प्रभाव भी बताया है। लोक-नाट्य की विशेषताओं और तुर्रा-कलंगी का विस्तार से वर्णन है। गुंसाई और शाह अली के बीच के दंगल का जिक्र है। तुर्रा शक्ति और कलंगी पुरुष (शिव) का प्रतीक है।

मालवा की माच परम्परा के संवाहक सिद्धेश्वर सेन ने माच के खेल रचे भी हैं। उनका लेख भी महत्वपूर्ण बन पड़ा है। उज्जैन से प्रारंभ इस गाथा के नायक गोपाल गुरु हैं तो बाद में बालमुकुंद जी। माच नायक जावरा के तो गायिका कालूराम की शिष्या। वैसे माचों में पुरुष ही स्त्री स्वांग रखते रहते हैं। इसी प्रकार विभिन्न वाद्य एवं नृत्यों का भी उल्लेख श्री सेन ने किया है। 'माच का दर्शन' में डॉ. भगवतीलाल राजपुरोहित ने संस्कृत ग्रंथों से बात प्रारंभ की है, जहाँ कालिदास का नाट्य दर्शन भी है। उन्होंने सांख्य दर्शन से वही पुरुष-प्रकृति के बीज का माच में प्रस्फुटन होते दर्शाया है।

'राजस्थान और मालवा का ख्याल माच' में डॉ. महेन्द्र भानावत ने मालवा-राजस्थान को भौगोलिक और सांस्कृतिक रूप से नजदीक बताया जो सहज सत्य है। इसमें विदूषक संस्कृत नाटकों की तरह अनिवार्य रहा।

डॉ. श्यामसुन्दर निगम ने तुर्रा-कलंगी को नौटंकी से एकदम पृथक बताया है। लोकानुरंजन है, किंतु लोक आदर्श के साथ। मंच, बोली, वेशभूषा, गीत-संगीत, लय-नृत्य तक की बारीकियों का उल्लेख किया है। माच गुरुओं की फेहरिस्त सिलसिलेवार है। माच स्थल एवं विषय तथा विधान परम्परा श्लाघनीय है।

डॉ. जगदीशचन्द्र शर्मा सीधे माच को मचान से जोड़ते हैं। परवर्ती प्रांतों के साथ मालवा में केन्द्रित माच गीतों से परिपूर्ण है। मालवा की नकल, स्वांग कला, सवाल-जवाब का सिलसिला, सूझ और दर्शन के साथ इतिहास और लोकजीवन से सम्मिश्रित है। इनमें गणेश, हनुमान भी लोक स्वरूप में हैं। वे भानावत के हवाले से शेर खाँ पठान जैसे नायकों को भी सम्मिलित करते हैं। इसमें प्रेम वृत्तांत, संत चरित्र अहम स्वरूप में हैं।

डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा ने उज्जैन की माच परम्परा पर केन्द्रित लेख में मालवा को विक्रमादित्य और कालिदास से लेकर भोज-मुंज काल तक सांस्कृतिक वैभव से पोषित बताया है। अन्य लेखों से उज्जैन के माच गुरुओं का ब्यौरा अधिक है। डॉ. शर्मा सरल-सहज शैली में प्रभावी परिचय छोड़ते हैं। वे अंकुर मंच तक वृत्तांत पूर्ण करते हैं।

डॉ. शिव चौरसिया जैसे सुघर कवि-वक्ता हैं, वैसे ही माच के पैरोकार भी। वे मालवा का प्रांत और प्रांतों की सीमा तोड़ता परिक्षेत्र बताते हैं। माच को सीधे लोक-नाट्य कहा है। इसकी तुल्यता गरबा, तमाशा, नौटंकी, गबरी के समकक्ष है। डॉ. चौरसिया के अनुसार मुस्लिम आक्रमणों से इतिहास में जो हुआ उसके विपरीत समृद्धि आई, नई धाराएँ जुड़ीं। उज्जैन, बड़नगर, नीमच के परिक्षेत्र से वर्तमान तक कलम चली है।

डॉ. शिवकुमार मधुर ने माच को लोक-संस्कृति के विविध रंगों से चित्रित बताया है। माच को लोक जीवन का अपना साहित्य भी कहा है। वैवाहिक पद्धति का चित्रण भी उनमें एक बताया। बनड़ा, बधाबा, पारसी, कामण सोदाहरण है। सती वृत्तांत भी है, जो लोक

जीवन में रचा-बसा रहा। हल्दी गीत से भोजन तक का परिदृश्य उकेरा है।

डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा ने अपने तीसरे संकलित आलेख में सामाजिक समरसता के महत्वपूर्ण सूत्र माच में तलाशे हैं। इतना ही नहीं, उसकी महती भूमिका भी उजागर करते हैं। वेदकालीन संदर्भ से तुलसीकाल तक दृष्टिपात करते हैं। भरत मुनि के नाट्य शस्त्र से लोक-नाट्य माच तक नजर दौड़ाते हैं। उन्होंने मालव सीमा, उससे लगे राजस्थान के ख्याल का प्रभाव और उज्जैन को माच भूमि निरूपित किया है। समरसता के अन्तर्गत दर्शन से लेकर सामाजिक समता तथा धार्मिक सहिष्णुता तक की भाव भूमि पर दृष्टिपात किया है। धार्मिक कथाओं का अतिरेक नहीं, समृद्धकारी कहना उचित होगा। वीरतापूर्ण कथानकों की भी शक्ति बताई है। लोक मंगल और साम्य भावना उभरी है। जाति एवं समाज संबंधी समस्या पर भी माच सुधारक दृष्टि रखते रहे हैं। निष्कर्ष में वे माच को सच्चा साहित्य कहते हैं, जो मूलतः सामाजिक-वैचारिक क्रांति का मार्ग प्रशस्त करता है।

मालवी माच में चिंतन की यात्रा नरहरि पटेल ने अपने लेख में की है। संक्षिप्त, सारगर्भित लेखन में इसे लोकरंजक बताया है। डॉ. प्यारेलाल सरस पंडित ने अपने लेख में प्रभावी लोक-नाट्य माच और उसके संगीत पक्ष पर बखूबी प्रस्तुति की। चूँकि लेखक संगीत के ज्ञाता हैं और माच की जान संगीत, वह भी ठेठ लोक अंचल का। उन्होंने इसमें 68 रंगतें (धुनें) बताई हैं, जो 24 लोक धुन पर आधारित हैं। स्वयं सिद्धेश्वर सेन ने 24-25 रंगतें साधी थीं। इस पर शोध कराना, उपादेय होगा। ढोलक, सारंगी, हारमोनियम, क्लेरेनेट जैसे साद्यों के साथ घुंघरू तो नर्तक के पगों में शुरू से होते हैं।

संपादक डॉ. शर्मा ने 'लोक-नाट्य माच की प्रदर्शन शैली और शिल्प' विषय लेकर फिर उपस्थिति दर्ज की है। यह आपका अध्ययन एवं सामर्थ्य है। रंगमंचीय खूबियों का महत्व तो है ही, दर्शकों को रात-रात भर जादुई कथानकों में बाँधे रखना विशेष तथ्य है। माच मंच खुला ही रहता है। जैसा सादा लोक जीवन, वैसा सादा माच मंच। मंच के रेखाचित्र के साथ ही लेख में आधारभूत पृष्ठभूमि का परिचय दिया है।

अशोक वक्त ने शायराना अंदाज में 'माच उफ शबे मालवा में थिरकती संस्कृति' में बात पूरी की है। उन्हें माच में मालवा और उज्जैन को केन्द्र बनाए आसपास के रंग बिखरे दिखे हैं। न केवल माच वरन् मांडनों से भी क्षेत्र जाना जाता है। तुर्रा-कलंगी वाला कथानक माच में ठेठ रूप लिए हुए है। उतना ही नहीं उन्होंने माच की अलग-अलग रिवायतें भी बताई हैं। क्षेत्रों का उल्लेख करते हुए तकनीक और स्वरूप-मंच साज-सज्जा, अभिनय सहित मालवी वैभव का कोश माच है।

मालवी कवि झलक निगम माच के संदर्भ 'ढोलक तान फड़क के' में सांगीतिकता पर बल देते हैं। उनके अनुसार सन् 1800 के आसपास राजस्थान की धारा उज्जैन की ओर आई वहीं विस्तार हुआ, जिसका सबने उल्लेख किया है। कलाकारों को रियासतें भी संरक्षण देती रही हैं। बालमुकुन्द जी से सिद्धेश्वर सेन और युवा अनिल पांचाल तक की माच यात्रा को श्री निगम ने सँजोया है। माच और काबुकी के तहत राजेन्द्र चावड़ा के इतिहास में 300 वर्ष की यात्रा की है। वे इसे पूर्व की श्वेत-श्याम फिल्म कहते हैं, जो रंगीन हो गया माच में। अभिनय, गायन और संगीत का परिपाक माच है। काबुकी में तत्कालीन राजा-महाराजाओं का जीवन चरित्र रहा। ये जापान के समुराई हैं, जो संस्कृति के रक्षक हैं। सहिष्णुता से माच व्यापक होता गया है।

डॉ. धर्मनारायण शर्मा ने तुर्रा-कलंगी को सांस्कृतिक, धार्मिक समन्वय का माध्यम माना है जो यथार्थ के सन्निकट है। माच में भी यही देशकाल परिस्थितियों के अनुसार आई है। उन्होंने ब्रह्म और माया का आधार तुर्रा-कलंगी परंपरा में दिखाया है। जाहिर है कि राजा नवाब की भोग विलासिता के विरुद्ध माच विधा विकसित हुई और इसका सद्भाव उपजाने वाला संदेश भी मुखर हुआ। यह कबीर और सूफी विचारों से प्रभावित है। इस संदर्भ में विशद चर्चा की गई है। उदाहरण उक्तियाँ भी सराहनीय और विषय प्रतिपादित करती हैं।

पूरन सहगल ने यायावरी शोध से 'दशपुर-मालवांचल की माच परम्परा' को अहम चर्चा का विषय बनाया। जैसे उज्जैन, वैसा गढ़ मंदसौर को बताया है। माच के उद्भव-विकास में चंदेरी का योग बताते हुए जयसिंह राठौर, शाहअली और तुकनगीर गुंसाई की अनिवार्य उपस्थिति दर्ज की, जो तुर्रा-कलंगी के मूल में है। अखाड़ों में रंगतें-लोकगीत खूब परवान चढ़े। इसी में नीमच, मल्हारगढ़, बघाना, धसूंड़ी का भी जिक्र है। इसमें संगीत, गायकी, नर्तन के समावेश का भी उल्लेख है। मेवाड़-झालावाड़ से प्रेरित माच आज दुर्दिन देख रहा है। उन्होंने इसे पुनर्जीवित करने की आवश्यकता बताई है।

इसी भाँति सुरेन्द्र शक्तावत नीमच पर केन्द्रित तुर्रा-कलंगी अखाड़ों के इतिहास की प्रामाणिक व्याख्या करते हैं। उन्होंने तुर्रा-कलंगी के प्रमुख खिलाड़ियों की सूची और कुछ चित्र भी दिये हैं। मंचन से लेकर उद्देश्य, संगीत पक्ष सामाजिक सरोकार तक को कुशलता के साथ रेखांकित किया है। माच की दृष्टि और संदेश के साथ कुछ संग्राहकों के संग्रह राष्ट्रीय धरोहर योग्य हैं।

ललित शर्मा की कलम से झालावाड़ की माच परम्परा की संक्षिप्त सारगर्भित प्रस्तुति की गई है। डॉ. पूरन सहगल के लेख में माच से हटकर प्रदर्शनकारी लोक कलाओं के ठाठ का विवरण है। वे कालबेलिया नृत्य, कच्छी घोड़ी नृत्य, घुमर घूमरा, भुवाई, माच, रासलीला, रामलीला, बहरूपिया, विवाह

अवसर के खेल-तमाशे, पाबूजी, देवनारायणजी की पड़, नट, बाज़ीगर, मदारी, सांसी, कंजर, बेड़नी नृत्य, मौजम बहार, कठपुतली, बाना, गरबा, कालगुवालिया का उल्लेख निपुणता से करते हैं।

मालवा की लोककलाएँ और लोकविधाएँ लेख में डॉ. आलोक भावसार ने अनूठापन बताया है। उन्होंने मांडना, गोदना, संजा, चित्रावण, लोकगीत, नृत्य, माच की चर्चा की है। ये सभी वसुधैव कुटुम्बकम् का समर्थन करते हैं।

'धन है मनक जमारो' में डॉ. विवेक चौरसिया की युवा कलम ने परम्परा के प्रति अनुराग और समर्पण जगाया है। प्रकृति के साथ घुल-मिलकर लोक जीवन में परम्पराएँ बल प्रदान करती हैं। प्रत्येक माह के तीज-त्यौहारों में समाहित लोक देवता और उनकी कृपा से जीवन में धन्यता बिखरते लोग हम हैं, हम सब हैं।

'मालवा में लुप्त होती लोक विधा-बेकड़ली' लेख में डॉ. धर्मेन्द्र वर्मा ने बेकड़ली की चर्चा की है, जिसे बेजड़ली (घालमेल) भी कहा जाता है। इसमें छल्ले गाते हैं माँगते हुए। यह एक प्रकार से लांगूरिया के निकट भी है। कान गुवालिया, डेंडक माता के सन्निकट भी।

'मालवी हीड़ लोक काव्य' लेख को रमाकांत चौरड़िया ने सिद्धेश्वर सेन की पंक्तियों के साथ प्रारंभ किया है- मोती की मनवार मालवो, ममता भरयो टिपारो, धर-धन या मालव की धरती, धन है मनक जमारो। हीड़ बगड़ावत वीर गाथा है। इसे मालवी-गुर्जर महाभारत भी कहते हैं। विभिन्न हीड़ें हैं- देवनारायण, चालर-गाय, साढू माता, धौला-बैल आदि की हीड़। पशुचारण काल में जन्मी हीड़ में 'हे ऽऽ' की टेर और लोकदेवताओं की स्तुति समाहित है।

पुस्तक में 'मालवा की चित्रकला-शैलचित्रों से चित्राचण तक'- (डॉ. भगवतीलाल राजपुरोहित), मालवा-निमाड़ एवं अन्य अंचल के पारम्परिक लोकचित्र (बसंत निरगुणे), मालवा की चित्रावण विधा (डॉ. लक्ष्मीनारायण भावसर), मालवा की लोककला मांडना और संजा (कृष्णा वर्मा) आदि जैसे महत्वपूर्ण और सारगर्भित लेख भी हैं। अस्सी का माच मेला-प्रयोजन एवं अनुभव, मालवा माच महोत्सव : खुली आँखों का सपना (हफीज खान), मालवा माच महोत्सव : विविध रंगी माच प्रस्तुतियाँ (डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा), मालवा माच महोत्सव : अपनी पहचान को बचाए रखने का सार्थक उपक्रम (राजेन्द्र चावड़ा) एक तरह से उपसंहार एवं आभारवत् लगते हैं। बाल माच प्रदर्शन और लोक संस्कृति संरक्षण की कोशिशें में पंकज आचार्य उम्मीद जगाते हैं। अंत में लोकरंग श्री सम्मान से विभूषित विभूतियों का विवरण है। यह ग्रंथ मालवी संस्कृति और माच के संरक्षण का सुदृढ़ चरण है। एदर्थ स्वागत ! साधुवाद !

चर्चित कृति : मालवा का लोकनाट्य माच और अन्य विधाएँ

सम्पादक : डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा

मूल्य : 100- रुपये, पृष्ठ 200, प्रथम संस्करण 2008

प्रकाशक : अंकुर मंच, फव्वारा चौक, उज्जैन

❖

रंगकर्मी श्री कन्हैयालाल कैथवास को राज्यस्तरीय संत कबीरदास पुरस्कार

राज्य शासन ने वर्ष 2008-09 के लिये श्री कन्हैयालाल कैथवास, रंगकर्मी जिला उज्जैन को एक लाख रुपये राशि का राज्य स्तरीय 'संत कबीरदास पुरस्कार' दिये जाने की घोषणा की है। श्री कैथवास को यह पुरस्कार उनके द्वारा रंगकर्मी विधा में किये गये उल्लेखनीय कार्यों के लिये प्रदान किया जावेगा। शासन ने इस संबंध में आदेश जारी किये हैं।

श्री रामसनेही को मध्यप्रदेश संत रविदास स्मृति सेवा पुरस्कार

राज्य शासन ने वर्ष 2008-09 के लिये श्री रामसनेही, अध्यक्ष-विमुक्त जाति अभ्युदय संघ, ग्वालियर, चंबल संभाग वाटर वर्क्स कालोनी-मुरैना को एक लाख रुपये राशि का 'मध्यप्रदेश संत रविदास सेवा पुरस्कार' प्रदान किये जाने की घोषणा की है। श्री रामसनेही को यह पुरस्कार उनके द्वार अनुसूचित जातियों के सामाजिक उत्थान के लिये किये गये उत्कृष्ट सेवा कार्य हेतु दिया जावेगा। शासन ने इस संबंध में आदेश जारी किये हैं।

त्रुटि सुधार

मध्यप्रदेश संदेश के जनवरी, 2010 अंक में प्रकाशित लेख **सिवनी में थी एक जेल जहाँ सुभाषचंद्र बोस बंदी** रहे, में ब्रिटिशकालीन कारागार सिवनी में निरुद्ध रहे स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों की सूची में श्री माधवसदाशिव गोलवलकर (गुरुजी) का उल्लेख त्रुटिवश हुआ है। लेखक को सिवनी जेल में ब्रिटिशकाल में बंद रहे स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों और अन्य प्रमुख व्यक्तियों की सूची जेल अधिकारियों द्वारा एक साथ उपलब्ध कराने के कारण यह त्रुटि हुई है। गुरु जी सिवनी जेल में 10.1.49 से 6.6.1949 की अवधि में निरुद्ध रहे हैं।

संपादक